बुद्धवर्ष २५४३, मार्गशीर्ष पूर्णिमा, २२ दिसंबर, १९९९ वर्ष २९ अंक ६

धम्मवाणी

सब्बपापस्स अकरणं, कुसलस्स उपसम्पदा।
सचित्तपरियोदपनं, एतं बुद्धान सासनं॥

– धम्मपद १८३ (बुद्धवग्ग)

सभी पापकर्मों से विरत रहना, कुशलचित्त की एकाग्रता सम्पादित करना और अपने चित्त का परिपूर्ण रूप से परिशोधन करना –केवल गोतमबुद्ध की ही नहीं, बल्कि सभी बुद्धों की यही शिक्षा है।

करुणापूर्ण सद्भावना

पिछले दिनों शाक्यमुनि गोतमबुद्ध की पावन जन्मभूमि लुंबिनी (नेपाल) में एक अंतर्राष्ट्रीय संगोष्ठी का आयोजन किया गया। चर्चा-परिचर्चा का विषय था – **'करुणा'** और इस कार्यशाला का उद्देश्य था –**पड़ोसी बुद्धानुयायी देशों से सुदृढ़ मैत्री संबंध स्थापित करना।**

करुणा :

करुणा मानवी मानस की एक अत्यंत उदात्त भावना है। मैत्री, मुदिता और समता की भांति यह भी एक ब्राह्मी विहार है। महज मौखिक स्तर पर करुणा के शब्दों का उच्चारण करना, उसकी व्याख्या करना,प्रशंसा करना –ये सब वास्तविक ब्रह्मविहार से कोसों दूर हैं। चिंतन के स्तर पर करुणा को एक आदर्श उदात्त भावना के रूप में स्वीकार करना इससे अच्छा है। परंतु वास्तविक ब्रह्मविहार से यह भी बहुत दूर है। ब्रह्मविहार का अर्थ है ब्रह्माचरण अर्थात श्रेष्ठाचरण अर्थात धर्माचरण। यह उदात्त भाव मन-मानस में लबालब भर जाय तो ही ब्रह्मविहार कहलाने योग्य है। मैत्री, मुदिता और समता के साथ इस ब्राह्मीभाव का हृदय में लबालब भर जाना तभी संभव है जबकि अंतर्मन की तलस्पर्शी गहराइयों तक मानस पूर्णतया विकारविहीन हो। यह निर्मलता और तज्जनित ब्राह्मी भावना धर्म धारण करने की चरम परिणति है।

धर्म धारण करने का अर्थ हुआ – शील-सदाचार का जीवन जीना। यानी शरीर और वाणी से कोई भी ऐसा काम नहीं करना जिससे अन्य प्राणियों की सुख-शांति का हनन होता हो, उनका अहित और अमंगल होता हो।

शील-सदाचार में पुष्ट होने के लिए आवश्यक है कि मन पर पूर्ण नियंत्रण हो, मन संयमित हो, अनुशासित हो। इसके लिए किसी निर्दोष आलंबन के आधार पर मन को एकाग्र करके समाधिस्थ होना आवश्यक है। निर्दोष आलंबन वह है जो न रागजनक है, न द्वेषजनक। जो स्वानुभूत सत्य पर आधारित है, मोह-मूढ़ता के आधार से मुक्त है।

परंतु ऐसे किसी निर्दोष आलंबन के आधार पर मन को एकाग्र करके समाधिस्थ हो जाना मात्र ही पर्याप्त नहीं है। बल्कि आवश्यक है कि स्वानुभूतियों के बल पर अंतर्मन की गहराइयों तक ऋतंभरा प्रज्ञा जगायी जाय और ऐसी प्रज्ञा में सतत स्थित रहा जाय। इसके अभ्यास द्वारा मन के उस अंतर्निहित स्वभाव-शिकंजे को विदीर्ण किया जा सकता है जो कि मोहमयी अज्ञान अवस्था में राग, द्वेष के संस्कारों का प्रजनन, संवर्धन और संचयन करता रहता है।

ऋतंभरा प्रज्ञा द्वारा इस स्वभाव-शिकंजे को दुर्बल करते-करते पूर्व संगृहीत मनोविकारों का निष्कासन होते जाता है, नयों का प्रजनन नहीं हो पाता। अंततः संपूर्ण मानस नितांत विकार-विहीन हो जाता है, निर्मल हो जाता है। तब मैत्री, करुणा, मुदिता और समता के ब्राह्मी गुणों से मानस स्वतः भर उठता है।

जब तक मन में पूर्व विकारों का संग्रह विद्यमान रहता है और नए-नए विकारों द्वारा इस संग्रह का संवर्धन होता रहता है तो वास्तविक ब्राह्मीभाव जाग ही नहीं पाता। सभी विकारों के गर्भ में अहं की भूमिका होती है। जब तक मानस अहंकेंद्रित है, स्वकेंद्रित है तब तक ब्रह्मविहार नहीं हो सकता। इन चारों ब्रह्मविहारों की चर्चा भले कर लें, इनकी प्रशस्ति-प्रशंसा भले कर लें। वास्तविक ब्रह्मविहार नहीं हो पाता।

मानस जितना-जितना विकारों से मुक्त होता है उसमें उतना-उतना ब्रह्मविहार जागता है। पूर्णतया विमुक्त होने पर साधक सतत शुद्ध ब्रह्मविहार का जीवन जीने लगता है। अतः मैत्री, करुणा, मुदिता और समता के ब्राह्मीभावों के लिए शील, समाधि और प्रज्ञा में पुष्ट होना नितांत आवश्यक है।

शील, समाधि और प्रज्ञा के धर्माचरण पर किसी एक व्यक्ति, किसी एक जाति, गोत्र, वर्ण, वर्ग का, समाज, समूह या संप्रदाय का एकाधिकार नहीं होता। यह धर्माचरण सार्वजनीन है। इसे पर्याप्त परिश्रम द्वारा कोई भी व्यक्ति धारण कर सकता है। जो भी व्यक्ति

इसे धारण करके निर्मलचित्त होता है वह मैत्री, करुणा और सद्भावना से स्वतः ओतप्रोत हो उठता है। जैसे दूषित चित्त के दुर्गुणों को हम हिंदू, मुस्लिम, बौद्ध, जैन आदि आदि लेबल नहीं लगा सकते; वैसे ही निर्मल चित्त के मैत्री, करुणा, सद्भावना जैसे सद्गुणों को भी कोई लेबल नहीं लगा सकते। मानसिक दुर्गुण और सद्गुण सब के लिए एक जैसे होते हैं।

जैसे शील, समाधि और प्रज्ञा का शुद्ध धर्म सार्वजनीन है, सार्वदेशिक है, सार्वभौमिक है, सार्वकालिक है, सनातन है; वैसे ही मैत्री, करुणा आदि ब्रह्मविहार भी उसी से उत्पन्न होने के कारण सार्वजनीन हैं, सार्वभौमिक हैं, सार्वकालिक हैं, सनातन हैं। हिंदू हो या बौद्ध, जैन हो या सिक्ख, मुस्लिम हो या पारसी या ईसाई हो या यहूदी, संसार में कोई भी ऐसी परंपरा नहीं है जो शील-सदाचार की महत्ता को अस्वीकार करे। चित्त की एकाग्रता और निर्मलता को अस्वीकार करे और उससे उत्पन्न हुई करुणा और सद्भावना को अस्वीकार करे।

भिन्न-भिन्न समाजों, समुदायों या यों कहें संप्रदायों के पूजन-अर्चन के विधि-विधान, पूजन-अर्चन के स्थल, कर्मकांड, तीज-त्यौहार, पर्व-उत्सव, व्रत-उपवास भिन्न-भिन्न होते हैं। उनकी दार्शनिक मान्यताएं भिन्न-भिन्न होती हैं। वस्तुतः इन विभिन्नताओं के आधार पर ही विभिन्न संप्रदायों का अस्तित्व स्थापित होता है और फलता-फूलता है। परंतु शील, समाधि, प्रज्ञा और मैत्री, करुणा, सद्भावना का धर्म अभिन्न होता है। किसी भी समाज, समूह, जमात या संप्रदाय के लिए एक जैसा होता है। यह सार्वजनीन धर्म और तज्जनित करुणा सारे संप्रदायों को जोड़ती है। अपनी-अपनी संप्रदायगत विभिन्नताओं को कायम रखते हुए भी सार्वजनीन धर्म के धरातल पर सब एक हो सकते हैं। मैत्री, करुणा के ब्राह्मीभाव में सब एक हो सकते हैं।

पड़ोसी बुद्धानुयायी देशों के साथ मैत्री-संबंध :

शील, समाधि और प्रज्ञा के सार्वजनीन धर्म का पालन और उसके आधार पर जागी हुई करुणा का ब्राह्मीभाव अभिन्न होने के कारण भिन्न-भिन्न मतावलंबियों को जोड़ने की सफल भूमिका अदा कर सकता है। इसके आधार पर भारत और पड़ोसी बुद्धानुयायी देशों के मैत्री-संबंधों का सुदृढ़ होना निःशंक है, निःसंशय है। अतः निश्चित है।

परंतु यदि इन पड़ोसियों से संबंध स्थापित करते हुए निम्न विधि-निषेधों का ध्यान न रखा जाय तो मैत्री का सारा प्रयास सर्वथा निष्फल ही नहीं हो जाता, बल्कि दुर्भावनापूर्ण दुश्मनी में बदल सकता है।

१. विष्णु का अवतार बता कर जब कोई यह समझता है कि वह विष्णुरूपी ईश्वर के समकक्ष बुद्ध को भी राम और कृष्ण की श्रेणी में स्थापित कर रहा है और पूज्य बना रहा है तो अनजाने में बहुत बड़ी भूल कर रहा है। वह वस्तुतः बुद्ध का अपमान कर रहा है। वह बुद्ध जो सम्यक संबोधि प्राप्त कर जन्म-मरण के आवागमन से सर्वथा विमुक्त हो गया और जिसने उस विमुक्त अवस्था को प्राप्त कर स्वयं यह घोषणा की कि **अयमन्तिमा जाति** – यह मेरा अंतिम जन्म है। **नत्थिदानि पुनब्भवोति** – अब मेरा पुनर्जन्म नहीं होगा। भवसंसरण से सर्वथा विमुक्त हुए ऐसे बुद्ध को बार-बार जन्म लेने वाले विष्णु का अवतार बताना बुद्धभक्तों को कैसे प्रिय लगेगा भला?

अवतारवाद की मान्यता की उत्पत्ति पुराणों से हुई लगती है। बुद्ध को विष्णु को अवतार सिद्ध करने की कथा-संरचना वस्तुतः विष्णुपुराण में ही हुई और तदनंतर अन्य पुराणों में दोहराई जाती रही। इस मान्यता का उद्भव जिस लज्जाजनक गरहा से भरा हुआ है वह पड़ोसियों को अप्रिय ही नहीं, बल्कि चुभे हुए विषैले तीर की भांति पीड़ाजनक लगती है। जब वे सुनते हैं कि विष्णुपुराण की इस कथा के अनुसार बुद्ध विष्णु के सद्गुणों का नहीं, बल्कि उसके मायामोहरूपी दुर्गुणों का अवतार था और उस अवतार का एक मात्र लक्ष्य यही था कि तत्कालीन वेदानुयायियों को वेद-विमुख करके स्वर्ग जाने से वंचित कर दे ताकि इंद्र और उसके साथी देवताओं का राज्य सुरक्षित रहे। इस कथन द्वारा बुद्ध को ही नहीं, उनकी शिक्षा को भी गर्हित किया गया है। जन-जन को जन्म-मरण के बंधनों से मुक्ति दिलाने वाली मोहनाशिनी पुरातन विपश्यना विद्या को प्रकाशित करने वाले और इस कारण सारे विश्व में करुणावतार के रूप में ख्याति पाने वाले बुद्ध को कपट-जाल फैला कर लोगों को नरक भेजने वाला मायामोह का अवतार घोषित करना तथ्य-विरुद्ध ही नहीं है, बल्कि नितांत द्वेषपूर्ण भी है। अतः मध्ययुग में पारस्परिक विग्रह-विरोध के कारण बुद्ध को विष्णु का अवतार बताने की जो भूल पहले हुई, उसे अब न दोहराने में ही सब का कल्याण है।

अवतारवाद की परिकल्पना का अगला संस्करण तो और अधिक द्वेषपूर्ण है जब यह कहा गया है कि विष्णु का अगला याने दसवां 'कल्कि अवतार' बौद्धों का संहार करके संसार से उन्हें समाप्त करने के लिए ही होगा। यह जान कर बुद्धभक्तों को कितनी चोट पहुँचेगी, इसे समझना चाहिए। यदि पड़ोसी देशों से सचमुच संबंध सुधारने हैं तो बुद्ध से संबंधित अवतारवाद का यह दूषित प्रकरण शीघ्र समाप्त कर देने में ही सब का भला है।

२. ध्यान रखने की एक और आवश्यक बात है जो पड़ोसियों को मर्मांतक चोट पहुँचाती है। जब कोई यह कहता है कि बुद्ध के पास अपनी ओर से देने के लिए कुछ नहीं था; उसकी शिक्षा का स्रोत वैदिक परपंरा है तब मिथ्या होने के कारण यह कथन उन्हें बहुत पीड़ित करता है। सच्चाई यह है कि बुद्ध श्रमण परंपरा के उन्नायक थे। वे प्रार्थनाओं को महत्त्व न देकर अपने ही परिश्रम पुरुषार्थ को महत्त्व देते थे। उन्होंने स्पष्ट कहा कि मैं मुक्तिदाता नहीं, मार्गदाता हूं। वैदिक और श्रमण परंपरा का यह भेद बहुत स्पष्ट है। यह कहना कि बुद्ध के पास देने के लिए कुछ नहीं था, कितना गलत है, जबकि उन्होंने मन और शरीर के पारस्परिक संबंधों का कितना विस्तृत वर्णन किया है। **"शरीर पर होने वाली संवेदनाओं के कारण मन में विकारों का जागना और उनका संवर्धन होना और इन्हीं संवेदनाओं को साक्षीभाव से देखते रहने पर पुराने संस्कारों का निष्कासन होना और नयों के प्रजनन पर रोक लगनी",** यही अपने आप में बुद्ध की बहुत बड़ी देन थी। उन्होंने जो मुक्तिदायिनी विपश्यना विद्या सिखायी, वह केवल भारत और नेपाल के लिए ही नहीं, बल्कि विश्व की समस्त मानव जाति के लिए एक अनमोल आशुफलदायिनी वैज्ञानिक खोज साबित हुई। अतः बुद्ध और उनकी श्रमण परंपरा को वैदिक परंपरा पर आश्रित

बताना असत्य भी है और बुद्ध-भक्तों के लिए असह्य भी। अतः ऐसे कथन से बचना ही उचित है। सच्चाई को ध्यान में रखते हुए यही कहना चाहिए कि वैदिक और श्रमण परंपराएं दोनों ही भारत की स्वतंत्र पुरातन परंपराएं हैं। सदियों से साथ-साथ प्रचलित इन दोनों परंपराओं ने एक-दूसरे को कुछ अंशों में प्रभावित भी अवश्य किया है। परंतु किसी एक को दूसरी से उत्पन्न हुआ बताना उसका अवमूल्यन करना होगा। ऐसा करना उचित नहीं है। ऐसा करने से संबंधों में दरार ही पड़ेगी।

३. पड़ोसी बुद्धभक्तों को आश्वस्त करने के लिए यह भी अत्यंत आवश्यक है कि देश में रहने वाले वेदानुयायियों और बुद्धानुयायियों के स्नेह-संबंध बढ़ें। उनमें पारस्परिक द्वेषभाव रंचमात्र भी न रहे। यह केवल पड़ोसियों को ही प्रसन्न संतुष्ट करने के लिए नहीं, बल्कि भारत की अपनी अखंडता और अस्मिता को कायम रखने के लिए भी आवश्यक है। जन्म पर आधारित वर्ण-विभाजन और आगे चल कर उसी से उत्पन्न हुई अनेकानेक जातियों और उपजातियों ने देश को कितना दुर्बल बनाया है! जातिवादी व्यवस्था अब भी देश को दुर्बल ही बना रही है। चाहे जिस उद्देश्य से पूर्वकाल में किसी मां की कोख से जन्मने को महत्त्व दिया जाता रहा हो, वह तब भी उचित नहीं था। परंतु आज की वस्तुस्थिति की नाजुकता को देखते हुए जन्म के आधार पर ऊंच-नीच की यह मान्यता देश के लिए बहुत खतरनाक सिद्ध हो रही है। इस मान्यता से धर्म की महत्ता खत्म होती है। नैतिकता और सच्चरित्रता का कोई मूल्य नहीं रह जाता। क्योंकि कोई व्यक्ति हजार दुराचारी होने पर भी अमुक मां के पेट से जन्मा है इसलिए समाज में उसका ऊंचा स्थान और हजार सदाचारी होने पर भी किसी अन्य मां के पेट से जन्मा है तो समाज में उसका नीचा स्थान – यह नितांत धर्मविरोधी व्यवस्था है। नैतिकता और सच्चरित्रता के धर्ममय जीवन की तुलना में किसी मां की कोख अधिक महत्त्वपूर्ण हो गयी, यह बड़े दुर्भाग्य की बात हुई। अतः अब समय आ गया है कि इस व्यवस्था में आमूल-चूल परिवर्तन किया जाय। एक व्यक्ति का सत्कर्म और सदाचरण ही उसे ऊंचा बनाता है और उसका दुष्कर्म और दुराचरण ही उसे नीचा बनाता है। नीचे से नीचा व्यक्ति भी दुष्कर्म त्याग कर, सत्कर्म करते हुए समाज में ऊंचा स्थान प्राप्त कर सकता है। जब यह व्यवस्था प्रतिष्ठित हो जायगी तो धर्म का सही मूल्यांकन होगा और जातिवाद का जो जहर देश में फैला है वह दूर होगा। देशवासियों में पारस्परिक प्यार बढ़ेगा और आसपास के पड़ोसी देशों पर भी इसका अच्छा असर पड़ेगा।

श्रद्धेय शंकराचार्यजी से वार्तालाप

लुंबिनी में होने वाली इस संगोष्ठी के पूर्व कांची के श्रद्धेय शंकराचार्यजी से इस विषय में सारनाथ में बातचीत हुई। मुझे यह देख कर बहुत सुखद संतोष हुआ कि उन्होंने इन तीनों बातों पर मेरे विचारों से अपनी सहमति प्रकट की और स्थानीय पत्रकारों के सामने एक संयुक्त प्रेस विज्ञप्ति जारी करवायी। इस विज्ञप्ति का शब्दशः प्रारूप नीचे उद्धृत किया गया है। हम आशा करते हैं कि देश के समझदार लोग इससे सहमत होंगे और सहयोग देंगे, जिससे अपने देश का भी कल्याण होगा और पड़ोसी देशों के साथ मैत्री-संबंध भी सुधरेंगे। संप्रदायों के मुकाबले धर्म की शुद्धता और महानता पुनः स्थापित होगी तथा देश में रहने वाले विभिन्न परंपराओं के सभी लोग सार्वजनीन धर्म का पालन करते हुए चित्त को निर्मल करने और उसमें शुद्ध मैत्री, करुणा की सद्भावना जागृत करने में कुशल होंगे और सारे देश में सुख-शांति और समृद्धि की वृद्धि होगी। धर्म की शुद्धता में ही सब का मंगल समाया हुआ है। सब का कल्याण, सब की स्वस्ति-मुक्ति समायी हुई है।

कल्याणमित्र,

सत्यनारायण गोयन्का.

जगद्गुरु श्रद्धेय शंकराचार्य श्री जयेन्द्र सरस्वतीजी और विपश्यनाचार्य गुरुजी श्री सत्यनारायण गोयन्काजी की संयुक्त प्रेस विज्ञप्ति

स्थलः महाबोधि कार्यालय, सारनाथ, वाराणसी (उत्तर प्रदेश)

समयः दोपहर: ३:३०, **दिनांक १२-११-१९९९.**

जगद्गुरु कांची कामकोटि पीठ के श्रद्धेय शंकराचार्य श्री जयेन्द्र सरस्वतीजी और विपश्यनाचार्य गुरुजी श्री सत्यनारायण गोयन्काजी की सौहार्द्रपूर्ण वार्तालाप की संयुक्त विज्ञप्ति प्रकाशित की जा रही है। दोनों इस बात से सहमत हैं और चाहते हैं कि दोनों प्राचीन परंपराओं में अत्यंत स्नेहपूर्वक वातावरण स्थापित रहे। इसे लेकर जिन पड़ोसी देशों के बन्धुओं में किसी कारण किसी प्रकार की गलतफहमी पैदा हुई हो, उसका शीघ्रातिशीघ्र निराकरण हो। इस संबंध में निम्न बातों पर सहमति हुई : –

१) किसी भी कारण से पूर्वकाल में पारस्परिक मतभेदों को लेकर जो भी साहित्य निर्माण हुआ, जिसमें भगवान बुद्ध को विष्णु का अवतार बता कर जो कुछ लिखा गया, वह पड़ोसी देश के बंधुओं को अप्रिय लगा, इसे हम समझते हैं। इसलिए दोनों समुदायों के पारस्परिक संबंधों को पुनः स्नेहपूर्वक बनाने के लिए हम निर्णय करते हैं कि भूतकाल में जो हुआ, उसे भुला कर अब हमें इस प्रकार की किसी मान्यता को बढ़ावा नहीं देना चाहिए।

२) पड़ोसी देशों में यह भ्रांति फैली कि भारत का हिंदू समुदाय बुद्धानुयायियों पर अपना वर्चस्व स्थापित करने के लिए इन कार्यशालाओं का आयोजन कर रहा है। यह बात उनके मन से सदा के लिए निकल जाय, इसलिए हम यह प्रज्ञापित करते हैं कि वैदिक और बुद्ध-श्रमण की परंपरा भारत की अत्यंत प्राचीन मान्य परंपराओं में से हैं। दोनों का अपना-अपना गौरवपूर्ण स्वतंत्र अस्तित्व है। किसी एक परंपरा द्वारा अपने आपको ऊंचा और दूसरे को नीचा दिखाने का काम परस्पर द्वेष, वैमनस्य बढ़ाने का ही कारण बनता है। इसलिए भविष्य में कभी ऐसा न हो। दोनों परंपराओं को समान आदर एवं गौरव का भाव दिया जाय।

३) सत्कर्म के द्वारा कोई भी व्यक्ति समाज में ऊंचा स्थान प्राप्त कर सकता है और दुष्कर्म के द्वारा पतित होता है। इसलिए हर व्यक्ति सत्कर्म करके तथा काम, क्रोध, मद, मोह, लोभ, मात्सर्य, अहंकार इत्यादि अशुभ दुर्गुणों को निकाल कर अपने आप को समाज में उच्च स्थान पर स्थापित करके सुख-शांति का अनुभव कर सकता है।

उपर्युक्त तीनों बातों पर हम दोनों की पूर्ण सहमति है तथा हम चाहते हैं कि भारत के सभी समुदाय के लोग पारस्परिक मैत्री भाव रखें तथा पड़ोसी देश भी भारत के साथ पूर्ण मैत्री भाव रखें।

कलकत्ता में पूज्य गुरुदेव का सार्वजनिक प्रवचन

५-१-२००० को, स्थानः 'कला मंदिर', ४८ शेक्सपियर सारणी, कलकत्ता-७०००१७. **समयः** प्रातः १० से ११ बजे तक साधकों की **सामूहिक साधना**, ११ से १२ **प्रवचन** तथा १२ से १२:३० **प्रश्नोत्तर**.

म्यंमा यात्रा

५ जनवरी, २००० को म्यंमा (बर्मा) जाने वाले यात्रियों के उतरने-ठहरने आदि में सहायता के लिए कृपया निम्न व्यक्तियों से संपर्क करें -१) श्री चंद्रभान काजड़िया, फोनः नि. ५५५५३७५, मोबाइल- ९८३१० २४७४२. २) श्री सुदर्शन ढंढारिया, फोनः नि. २३९३६९७ ५५४९, मो. ९८३१० २३९९९. फैक्सः २४२५५२७. ३) श्री श्यामसुंदर अग्रवाल, नि. ५३०३८५६, ५५४२२७५, मो. ९८३०० २२२७५. ४) श्री अशोक अग्रवाल, ३५९७७२३, ३३७४०३५, मो. ९८३०० ३०२९२. फैक्सः २३२१२२७.

नूतन वर्षाभिनंदन

हर वर्ष की तरह अनेक साधकों की ओर से दीपावली एवं नव वर्ष के अभिनंदन-पत्र मिले हैं। एक-एक को नव वर्ष की मंगल कामना प्रेषित कर पाने का अवसर नहीं मिल पाया, इसलिए 'विपश्यना' पत्रिका के माध्यम से उन्हें तथा अन्य सभी साधक-साधिकाओं को मेरी असीम मंगल मैत्री पहुँचे! नव वर्ष सब के मानस में धर्म की नवज्योत प्रज्वलित करे! दिनोंदिन प्रज्ञा पुष्टतर होती जाय! धर्म धारण करने का मंगलकारी फल प्रभूत हो! प्रभावशाली हो! सब का मंगल हो!

मंगल मित्र,
सत्यनारायण गोयन्का

दूहा धरम रा

सील धरम रो आंगणो, ध्यान धरम री भींत।
प्रग्या छत है धरम री, मंगल भुवन पुनीत॥

बाहर भीतर एक रस, सरल स्वच्छ ब्योहार।
कथनी करणी एक-सी, यो हि धरम रो सार॥

सुख छावै संसार मँह, दुखियो रवै न कोय।
जन जन मन जागै धरम, जन जन सुखियो होय॥

धरम धरा सूं फिर बवै, सुद्ध धरम री धार।
एक बार फिर स्यूं हुवै, सकल जगत उद्धार॥

द्वेस द्रोह दुरभाव रो, रवै न नाम निसान।
स्नेह और सद्भाव स्यूं, भरल्यां तन मन प्राण॥

जन जन रै मन प्यार री, गंगा बवै पुनीत।
यो ही साचो धरम है, हुवै परस्पर प्रीत॥

मेसर्स गो गो गारमेंट्स
३१ -४२, भांगवाड़ी शॉपिंग आर्केड,
१ला माला, कालबादेवी रोड, मुंबई - ४००००२.
☎ २०५०४१४
की मंगल कामनाओं सहित

दोहे धर्म के

धर्म धर्म तो सब कहें, पर समझे ना कोय।
निर्मल चित का आचरण, धर्म शुद्ध है सोय॥

शील धरम पालन करें, कर समाधि अभ्यास।
ऋतंभरा प्रज्ञा जगे, करे दुखों का नाश॥

बँधे जाति से वर्ण से, छुटा धर्म का सार।
सार छुटा निस्सार ही, हुआ शीश का भार॥

यह संतों की भूमि है, सद्गुरुओं का देश।
इसके कण-कण में भरा, करुणा का संदेश॥

बीती बातें भूल कर, बैरभाव बिसराय।
करुणा मैत्री प्यार से, मनमानस लहराय॥

द्वेष अग्नि पर प्यार की, अमृत वर्षा होय।
सबका मन शीतल करे, सबका मंगल होय॥

मेसर्स मोतीलाल बनारसीदास
• महालक्ष्मी मंदिर लेन, ८ महालक्ष्मी चैंबर्स, २२ वार्डन रोड, मुंबई-४०००२६.
☎-४९२३५२६, • सनस प्लाजा, शॉप ११-१३, १३०२, सुभाष नगर, पुणे-४११००२. ☎-४८६१९०, • दिल्ली- २९११९८५, • पटना- ६७१४४२, • वाराणसी- ३५२३३१, • बैंगलोर- २२१५३८९, • चेन्नई- ४९८२३१५, • कलकत्ता- २४३४८७४

'विपश्यना विशोधन विन्यास' के लिए प्रकाशक, मुद्रक एवं संपादकः राम प्रताप यादव, धम्मगिरि, इगतपुरी-४२२४०३, दूरभाष : (०२५५३) ८४०८६, ८४०७६.
मुद्रण स्थान : अक्षर चित्र प्रिंटिंग प्रेस, ६९- बी रोड, सातपुर, नाशिक-४२२००७. **बुद्धवर्ष २५४३, मार्गशीर्ष पूर्णिमा, २२ दिसंबर, १९९९**

वार्षिक शुल्क रु. २०/-, विदेश में US $ 10
आजीवन शुल्क रु. २५०/-, " US $ 100
'विपश्यना' रजि. नं. १९१५६/७१.
Postal Reg. Number NSM 16/99.
Postal Permit number 18/99
Licenced to post without Prepayment

Posting day- **Purnima of Every Month**
Posted at Igatpuri-422403, Dist. Nashik

If not deliverd please return to:-
विपश्यना विशोधन विन्यास
धम्मगिरि, इगतपुरी - ४२२४०३
जिला-नाशिक , महाराष्ट्र भारत
दूरभाष : (०२५५३) ८४०७६
फैक्सः (०२५५३) ८४१७६
Website: www.vri.dhamma.org